R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-7 रुपये, वर्ष-23, अङ्क-8 अगस्त 2023 1

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

वात्सल्य पर्व

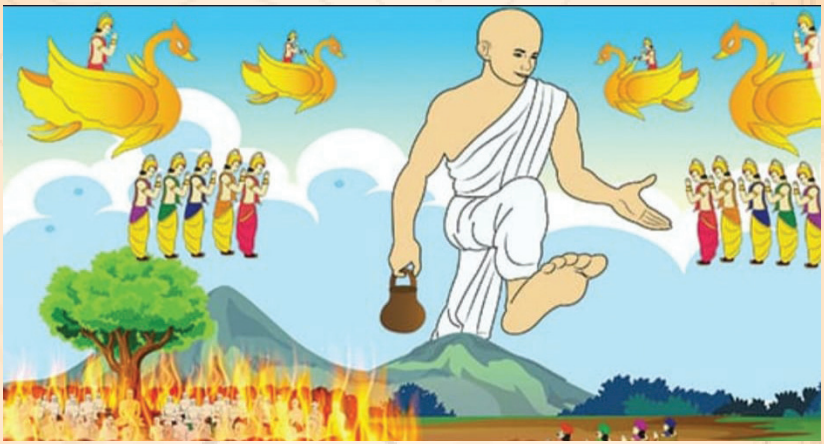

हस्तिनापुर का कण-कण पावन
अकम्पनादि सात सौ मुनियों का साधना धाम
उन आत्मतन्त्र उद्घोषक को है कोटि-कोटि सविनय प्रणाम!

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रतिष्ठाचार्य बालब्रह्मचारी पण्डित अभिनन्दनकुमार जैन, खनियांधाना मङ्गलार्थी बच्चों को उद्बोधन देते हुए।

मुनिराज की निर्मम हत्या के विरोध में अलीगढ़ जैन समाज द्वारा आयोजित शान्तिपूर्ण रैली में मङ्गलार्थियों ने भाग लिया

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-23, अङ्क-8 (वी.नि.सं. 2549; वि.सं. 2079) अगस्त 2023

वात्सल्य पर्व पर विशेष

विष्णुकुमार तुम्हें इस धरती पर फिर पग धरना है!

दशों दिशा में आज, धर्म पथ पर संकट आया है !
पातक और अधर्म, धर्म पर घन बन कर छाया है !
धर्माचरण, चरित्र, निरंतर घटते ही जाते हैं !
पापाचरणों में, यह वैभव, बँटते ही जाते हैं !
विष्णुकुमार तुम्हें इस धरती पर फिर पग धरना है !
रक्षा बन्धन आज तुम्हें सबकी रक्षा करना है !

पर नारी, हर मानव की, फिर धर्म बहिन कहलाऐ !
हर 'कर' में, यह प्रण देकर, रक्षा सूत्र पहिनाऐ !
लाज तथा भारत रक्षा में, प्राण भले ही जाऐ !
किन्तु राष्ट्र की मर्यादा को आँच न आने पाऐ !
युगों युगों तक जिये जिस तरह उसी तरह मरना है !
रक्षा बन्धन आज तुम्हें सबकी रक्षा करना है !

इस रक्षा बन्धन को केवल, कच्चा सूत्र न जानें !
इसके अन्दर छिपी भावना अन्तर में पहिचानें !
इस प्रण के, ऋण को जो समझा मिला उसे गौरव है !
हस्तिनापुर में 'महक' रहा, अब तक इसका सौरभ है !
इसी दृष्टि से, आज सभी की घोर विपद हरना है !
रक्षा बन्धन आज तुम्हें सबकी रक्षा करना है !

प्रण क्या है, प्रण पालन क्या है, जग इसको भूला है !
स्वार्थ परिधियों में सीमित हो, स्वार्थी बन फूला है !
नित कर्तव्य परायणता से, विमुख हुआ जाता है !
केवल अपने हित साधन में प्रमुख हुआ जाता है !
शिथिल, राष्ट्र के रोम रोम में नया प्राण भरना है !
रक्षा बन्धन, आज तुम्हें जग की रक्षा करना है !

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़
सम्पादक
डॉ. जयन्तीलाल जैन, मङ्गलायतन वि०वि०
सह सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन
पण्डित अभिषेक शास्त्री, मङ्गलायतन
सम्पादक मण्डल
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून
सम्पादकीय सलाहकार
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन
मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

नवीन संस्करण का प्रकाशन

तीर्थधाम मङ्गलायतन : साहित्य प्रकाशन की शृंखला में **कविवर पण्डित दौलतरामजी कृत छहढाला** ग्रन्थ।

साथ ही दैनिक पूजन-पाठ के संकलन के साथ **मङ्गल अर्चना** का भी पुन: प्रकाशन का कार्य चल रहा है। जिसमें समस्त पूजनों का संग्रह किया गया है। पुस्तकें सीमित होने से आप अतिशीघ्र अपनी प्रतियाँ सुरक्षित कर लेवें।

सम्पर्कसूत्र–
पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800;
पण्डित अभिषेक शास्त्री,7610009487
Email : info@mangalayatan.com

शुल्क :
एक प्रति : 07.00 ₹
आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

क्या – कहाँ

चरणानुयोग
देशव्रतोद्योतनम् 5
द्रव्यानुयोग
समयसार नाटक 9
स्वानुभूतिदर्शन : 16
प्रथमानुयोग
धार्मिक नगरी हस्तिनापुर 21
करणानुयोग
जानिये अरिहन्तों के 22
प्रथमानुयोग
कवि परिचय 23
करणानुयोग
श्रुत परम्परा एवं 25
प्रथमानुयोग
बालवाटिका 27
द्रव्यानुयोग
जिस प्रकार-उसी प्रकार 28
समाचार-दर्शन 30

चरणानुयोग

श्री पद्मनंदी आचार्य कृत श्री पद्मनंदी पंचविंशतिका के
देशव्रतोद्यन नामक अधिकार पर सत्पुरुषश्री कानजीस्वामी का प्रवचन

देशव्रतोद्योतनम्

(प्र० भाद्रपद सुदी 3, शनिवार, ता० 20-8-55)

गाथा-20

यत्र श्रावकलोक एव वसति स्यात्तत्र चैत्यालयो।
यस्मिन्सोऽस्ति च तत्र सन्ति यतयो धर्मश्च तैर्वर्तते।
धर्मे सत्यघसंचयो विघटते स्वर्गापवर्गाश्रयं सौख्यं
भाविनृणां ततो गुणावतांस्युः श्रावकाः सम्मताः ॥20॥

धर्मात्मा धर्म प्रवृत्ति का निमित्त है, अतः धर्मात्मा श्रावक का आदर करना चाहिए।

श्री पद्मनन्दि आचार्य सनातनमार्ग के अनुसार कहते हैं कि उनके समय में वीतरागी प्रतिमावाले मन्दिर बहुत थे, उन पर वस्त्र आदि नहीं होते किन्तु जैसा माता ने जन्म दिया, वैसी ही भगवान की प्रतिमा के दर्शनार्थ धर्मी जीव अपने ग्राम में नगर में मन्दिर बनाते हैं।

कहत बनारसी अल्प भव स्थिति जाकी।
सोई जिन प्रतिमा प्रवानै जिन सारखी॥

जिसे अपने ज्ञान के स्वरूप का बोध हुआ है, वह पूर्ण ज्ञानवाले भगवान की अविद्यमानता में उनकी प्रतिमा बनाता है। जिस ग्राम, नगर में जिनमन्दिर, जिनप्रतिमा नहीं है, वह ग्राम, नगर श्मशानतुल्य है। जहाँ जिनमन्दिर है, वहाँ मुनि, ब्रह्मचारी आदि के आने से शास्त्र-प्रवचन आदि होते हैं, जीव धर्म का श्रवण करके मननपूर्वक स्वाध्याय करे, और को करावे। यह शरीर तो नाशवान है—ऐसा विचार कर जो धर्म प्राप्ति के लिए विशेष प्रयत्न करते हैं, उनके पाप नष्ट होते हैं। जहाँ संसारी सवेरे से शाम तक सांसारिक कार्यों में लगा रहता है, वहाँ धर्मात्मा धर्म की प्रवृत्ति में दत्त-

चित्त रहता है। जो धर्मदृष्टिपूर्वक भगवान के दर्शन करते हैं, उनके पाप नष्ट होते ही हैं। आत्मभान बिना केवल दर्शन करने से पाप नष्ट नहीं होते। सत् प्राप्ति के इच्छुक, पूर्ण सत् को प्राप्त भगवान के दर्शन करते हैं। भगवान के दर्शन से निद्धति और निकांचित प्रकृति के उग्र बन्धवाले कर्म भी नष्ट हो जाते हैं। भगवान तीन काल और तीन लोक के साक्षी हैं; उन्हीं के समान मेरा स्वरूप भी तीन लोक का साक्षी है, ऐसी श्रद्धा करनेवाले ने अपूर्व सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है। ऐसा सम्यग्दृष्टि बहुत से पापों का नाश करता है। धर्मात्मा, रागरहित होकर मोक्ष जाता है या स्वर्ग जाता है, इसलिए धर्मात्मा श्रावक का आदर-सत्कार करना चाहिए। संसार में रहनेवाले जिन भाई-बहनों को आत्मज्ञान हो गया है और धर्म के प्रति अनुराग हो गया है, वे सम्मान और श्रद्धा के पात्र हैं।

भावार्थ:-धर्मात्मा श्रावक अपने धन से जिनमन्दिर बनाते हैं। वहाँ मुनि भी दर्शनार्थ आते हैं, उन मुनियों के आगमन से श्रावकों को धर्म श्रवण का लाभ होता है। विद्याचरण (ऋद्धि धारक) मुनि को आकाश में जाते हुओं को, नीचे पृथ्वी पर जिनमन्दिर दृष्टिगोचर हो जाये तो वे नीचे उतरकर दर्शन करते हैं। धर्मात्मा को रागांश से स्वर्ग मिलता है और तत्पश्चात् वह रागांश भी समाप्त हो जाता है, वे मोक्ष प्राप्त करते हैं। श्रावक-श्राविकादि द्वारा धर्म की प्रवृत्ति होती है, इसलिए वे धर्म की वृद्धि के निमित्त हैं, अत: उनका आदर अवश्य करना चाहिए।

गाथा - 21

काले दुखमसंज्ञके जिनपते धर्मेगते क्षीणतां,
तुच्छे सामयिके जाने बहुतरे मिथ्यान्धकारे सति।
चैत्ये चैत्यगृहे च भक्ति सहितो य: सोऽपि नो दृश्यते,
यस्तत्कारयते यथाविधि पुनर्भव्य: सवद्य: सताम्॥21॥

इस काल में धर्मात्मा तथा धर्म प्रवृत्ति की दुर्लभता है।

अहो! दुषम काल-कलिकाल में त्रिलोकीनाथ सर्वज्ञदेव का सत्य मार्ग

बहुत क्षीण हो गया है, इस मार्ग के विरुद्ध अनेक मार्ग हो गए हैं। आत्मभानवाले ज्ञान-ध्यान में लवलीन रहनेवाले मुनि इस काल में बहुत थोड़े हैं। एक हजार वर्ष पूर्व की बात कह रहे हैं। आत्मा आनन्दकन्द है, अमृत के समुद्र समान है, सच्चे मुनि ऐसे स्वरूप में दृष्टि और ध्यान लगाए रहते हैं और सिंह के समान निर्भय वृत्ति से जंगल में विचरण करते हैं। किन्तु वर्तमान में वह मार्ग बहुत कुछ अंशों में लुप्त हो गया है और विपरीत मान्यता और अज्ञान के अन्धकार का विस्तार हो गया है। जगत के प्राणियों का अधिकांश समय कमाने, खाने-पीने, भोगादि में चला जाता है और जो कुछ थोड़ा-सा समय बचता है, उसे साम्प्रदायिक कुगुरु लूट लेते हैं। मुनित्व क्या है ? निश्चय क्या है ? व्यवहार क्या है ? इनका ज्ञान उन कुगुरुओं को नहीं है। ऐसे कुगुरुओं के पास जाने से धर्म नष्ट हो जाता है। कहीं हंस न हो किन्तु सफेद बगुले हों, तो वे हंस थोड़े ही माने जाते हैं ? उसी प्रकार किसी का शरीर नग्न होने मात्र से वह भावलिंगी नहीं माना जा सकता और जिनके अन्य आचरण ठीक नहीं हों, उनका तो कहना ही क्या ?

जो जीव भक्तिपूर्वक जिनमन्दिर आदि बनाते हैं, वे वन्द्य हैं।

पहले श्रावक, भगवान की प्रतिमा के प्रति भक्तिभाव रखते थे तथा भक्तिपूर्वक जिनमन्दिर बनाते थे। किन्तु आजकल अपने निजी मकान बनाते समय ही बहुत ध्यान रखते हैं, पहले श्रावक लोग मन्दिर, प्रतिमा आदि के निर्माणार्थ बहुत दान देते थे। प्रतिमा वीतरागी और शान्त होनी चाहिए, जिसके दर्शन से अविकारी स्वरूप का भान, दृष्टा को हो। जो भव्य जीव इस समय में विधि अनुसार जिनमन्दिर आदि का निर्माण कराते हैं, वे वन्दनीय हैं। पहले के श्रावक-श्राविकाएँ आदि धर्म के प्रति भक्ति रखते थे, किन्तु आजकल तो सिनेमा आदि देखने की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। भगवान के दर्शन करते हुए ऐसा लगता है कि इन्द्र भी भगवान को नमस्कार करता था। समस्त उत्तम पुरुष भगवान की भक्तिसहित निर्मल हृदय से स्तुति करते हैं।

गाथा–22

बिम्बादलोन्नतिदेवोन्नतिमेव भक्त्या।
यैः कारयन्ति जिनसद्म जिनाकृति वा॥
पुण्यं तदीयमिह वागपि नैव शक्ता।
स्तोतुं परस्य किमु कारयितुर्द्वयस्य॥22॥

जो आत्मभानपूर्वक जिनमन्दिर का निर्माण कराते हैं, उनके पुण्य का वर्णन अगम्य है।

आचार्य कहते हैं कि जो जीव भक्तिपूर्वक कुन्दुक के पत्ते समान मन्दिर बनाता है अर्थात् जिसे निर्ग्रन्थ दशावाली मूर्ति का भाव हुआ है, वह छोटा सा मन्दिर और जौ जितनी प्रतिमा बनाता है, वह धन्य है। संसारी जीव अपने कुटुम्बियों की फोटो उतरवाने के लिए अच्छा फोटोग्राफर बुलाते हैं; उसी प्रकार यदि कोई वीतरागी प्रतिमा और मन्दिर न बनावे तो उसे धर्म की रुचि नहीं है। तीन लोक के नाथ का प्रतिबिम्ब उनकी स्थिति के अनुकूल ही पूर्ण वीतरागतायुक्त होना चाहिए—वह शृंगारयुक्त न हो, अपितु शान्त, वीतरागतायुक्त हो, ऐसी प्रतिमा और ऐसा ही मन्दिर बनानेवाले को पुण्य प्राप्त होता है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि एक पदार्थ, पर की क्रिया कर सकता हो किन्तु यहाँ शुभराग का कथन है। जो अनुराग भाव से जिनमन्दिर बनाता है, उसके पुण्य का वर्णन सरस्वती भी भली प्रकार नहीं कर सकती। जो धर्मी प्रेमसहित लाखों रुपए खर्च करके जैनमन्दिर और प्रतिमा बनाते हैं, उनको अनोखा पुण्य लाभ होता है। वे उस पुण्यजनित संयोगों को छोड़कर मुनि बन मुक्ति में जाएँगे। जिसे ऐसा प्रेम नहीं है, वह श्रावक नहीं कहला सकता। निश्चय दृष्टिवाले श्रावक को ऐसा भाव आए बिना नहीं रहता।

भावार्थ—बिम्बा पत्र तथा जौ की ऊँचाई बहुत थोड़ी है किन्तु आचार्य उपदेश देते हैं कि इस पंचम काल में अगर कोई मनुष्य बिम्बा पत्र के जितनी ऊँची प्रतिमा भी बनाता है, उसके पुण्य की स्तुति साक्षात् सरस्वती देवी भी भली प्रकार नहीं कर सकती।

शेष पृष्ठ 17 पर....

द्रव्यानुयोग

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

कर्त्ता कर्म क्रिया द्वार प्रवचन

आगे इस नाटक समयसार शास्त्र में कर्त्ता-कर्म-क्रिया द्वार के पाँचवें श्लोक का छठवाँ पद है। इसमें जीव और पुद्गल के भिन्न-भिन्न स्वभाव बताये हैं।

जीव और पुद्गल के जुदे-जुदे स्वभाव

जीव ग्यानगुन सहित, आपगुन-परगुन-ज्ञायक।
आपा परगुन लखै, नांहि पुग्गल इहि लायक॥
जीवदरव चिद्रूप सहज, पुदगल अचेत जड़।
जीव अमूरति मूरतीक, पुदगल अंतर बड़॥
जब लग न होइ अनुभौ प्रगट,
तब लग मिथ्यामति लसै।
करतार जीव जड़ करमकौ,
सुबुधि विकास यहु भ्रम नसै ॥6॥

अर्थः- जीव में ज्ञान गुण है, वह अपने और अन्य द्रव्यों के गुणों का ज्ञाता है। पुद्गल इस योग्य नहीं है और न उसमें अपने वा अन्य द्रव्यों के गुण जानने की शक्ति है। जीव चेतन है और पुद्गल अचेतन, जीव अरूपी है और पुद्गल रूपी, इस प्रकार दोनों में बड़ा अंतर है। जब तक भेदविज्ञान नहीं होता तब तक मिथ्यामति रहती है और जीव अपने को कर्म का कर्त्ता मानता है परन्तु सुबुद्धि का उजाला होने पर यह भ्रान्ति मिट जाती है॥6॥

काव्य - 6 पर प्रवचन

मूल श्लोक में 'स्व-पर परिणति' शब्द का प्रयोग किया है। उसका अर्थ द्रव्य-गुण-पर्याय और पर के द्रव्य-गुण-पर्याय का आत्मा जाननेवाला है ऐसा करना। परिणति का अर्थ केवल पर्याय मात्र ही यहाँ नहीं लेना। जीव

ज्ञान गुण सहित है, अत: अपने और पर के द्रव्य-गुण-पर्याय को जान सकता है, परन्तु पुद्गल में ज्ञान गुण नहीं है, इसलिए वह अपने द्रव्य-गुण-पर्याय अथवा पर के द्रव्य-गुण-पर्याय को नहीं जानता। पुद्गल में स्व-पर को जानने की योग्यता नहीं है।

'जीवदरव चिद्रूप सहज' -जीवद्रव्य स्वाभाविक ज्ञानस्वरूप चेतन है और पुद्गल अचेतन है। जीवद्रव्य अरूपी है और पुद्गल द्रव्य रूपी है, इसप्रकार दोनों में महान अन्तर है। इसीप्रकार जीव और राग में भी बहुत अन्तर है -ऐसा यहाँ समझ लेना।

जब तक जीव इन दोनों के बीच में भेदविज्ञान नहीं करता, वहाँ तक अज्ञान रहता है। मैं चैतन्य हूँ और यह शरीर, कर्म, रागादि मेरे से भिन्न है ऐसा जानकर अनुभव नहीं करता, वहाँ तक वह मिथ्यादृष्टि-मिथ्याबुद्धि को धारण करता है। इसकारण राग मेरा है और मैं उसका कर्त्ता हूँ ऐसा मिथ्या-अभिप्राय रहा करता है। वस्तु के स्वभाव में राग नहीं है; परन्तु जहाँ तक राग, शरीर और कर्म से भिन्न आत्मा का अनुभव नहीं करता, वहाँ तक वह मिथ्यामति जीव राग का कर्त्ता हुए बिना नहीं रहता। उसका कारण यह है कि जिसको अपने से एक रूप माने, उसका कर्त्ता वह होता ही है। अपने से रागादि को भिन्न जाने तो उसका कर्त्ता नहीं होता है।

'करतार जीव जड़ करम कौ, सुबुद्धिविकास यहु भ्रम नसै' - ज्ञान का विकास होने पर 'राग मेरा कार्य और मैं उसका कर्त्ता' ऐसा भ्रम नष्ट हो जाता है। जहाँ तक राग और आत्मा की एकता मानता है, वहाँ तक ही कर्त्ता होता है। दोनों की भिन्नता जानने पर कर्त्ताबुद्धि छूट जाती है। भगवान आत्मा तो ज्ञायक है। अमूर्तिक चैतन्य प्रकाशमय है और शरीर-कर्मादि तो अचेतन-जड़ है। पुण्य-पाप के विकल्प में चेतना नहीं है, इसलिए वह भी अचेतन है। जबतक उनमें इसकी दृष्टि पड़ी है कि 'यह मेरा अस्तित्व है', इनसे भिन्न अपने अस्तित्व का भान नहीं है, वहाँ तक वह (अज्ञानी) अपने को विकार का कर्त्ता मानता है।

यह सिद्धान्त ही है कि जीव जिसको अपना मानता है, उसका कर्त्ता हुए बिना नहीं रहता है। इसकारण वह जहाँ तक विकार को और पर को अपना मानता है वहाँ तक उनका कर्त्ता हुए बिना नहीं रहता है। जहाँ तक प्रकट आत्मा का अनुभव करके अपने को सबसे भिन्न नहीं जानता, वहाँ तक मिथ्याबुद्धि रहती ही है कि मैं पर और राग का कर्त्ता हूँ; तथापि जीव पर के कार्य तो कर ही नहीं सकता; राग का कर्त्ता होता है।

तू कहाँ है ?तू जहाँ है, उसका तू कर्त्ता है। यदि तू ज्ञान में है तो ज्ञान का कर्त्ता है और राग में है तो राग का कर्त्ता है। तू कौन है ?कहाँ है ?कैसे है ?- ऐसा अपने को पूँछने पर, मैं राग में हूँ, रागी हूँ, शरीरवाला हूँ, धनवाला हूँ ऐसा जवाब आता हो तो उनका ही कर्त्ता होगा; क्योंकि तेरी बुद्धि मिथ्या है। अब यदि सुख बुद्धि का विलास होने पर विकार और शरीरादि तो मेरे से भिन्न है- ऐसा भासित हो, मैं तो ज्ञायकस्वरूप हूँ, विकार मेरा स्वरूप नहीं है- ऐसा (विकारादि से) भिन्न पड़े तो स्वयं अपने से भिन्नस्वरूप का कर्त्ता नहीं होता। राग-द्वेष तो मैल है और मैं तो निर्मलस्वभावी हूँ- ऐसा जाने तो मैल का कर्त्ता नहीं होता।

आत्मा अपने जानने-देखने के परिणाम को करता है। यह भी भेद पाड़कर उपचार से कहा जाता है, परन्तु जहाँ तक पर्यायबुद्धि है, पुण्य-पाप और रागादि भावों में मेरेपने की बुद्धि है, वहाँ तक उसको कर्त्ताबुद्धि भी पड़ी है। जहाँ इसकी दृष्टि विभाव से हटकर स्वभाव में जाती है, वहाँ विभाव से भिन्न पड़ गया हुआ वह जीव विभाव का कर्त्ता नहीं होता, मात्र उस राग को जानता है। उन जानने के परिणाम का कर्त्ता स्वयं और वह ज्ञान परिणाम इसका कार्य है- ऐसा उपचार लागू पड़ता है। अभेद में भेद पाड़कर विचारे तो आत्मा के इस ज्ञान परिणाम का कर्त्तापना है; परन्तु आत्मा पर का कर्त्ता तो उपचार से भी नहीं है।

सुबुद्धि का विकास होने पर -चैतन्य स्वभाव का भान होने पर, राग से पृथक् पड़ा हुआ ज्ञान 'राग मेरा कार्य है और मैं उसका कर्त्ता हूँ'- ऐसा नहीं

मानता है। राग सम्बन्धी अपना ज्ञान यह मेरा कार्य है और मैं इसका कर्त्ता हूँ- ऐसा भेद उपचार से किया जाता है। मैं राग का कर्त्ता हूँ और राग मेरा कार्य है- ऐसा तो उपचार से भी नहीं है। सम्यग्ज्ञान का प्रकाश होने पर वह रागरूपी अंधकार का कर्त्ता नहीं होता है।

मैं पर की दया पाल सकता हूँ- ऐसी मान्यता तो मिथ्यादृष्टि की होती है; क्योंकि उसको 'मैं पर के कार्यों का अधिकारी हूँ'- ऐसा मानकर दया का भाव आया है। इसकारण वह परजीव और अपने को एक मानता है। जो दया के विकल्प को अपना मानता है, वह जीव विकार का कर्त्ता होता है और विकार मेरा कार्य है- ऐसा मानता है। परजीव को मारने का भाव आवे या बचाने का भाव आवे वे दोनों विकल्प हैं। जो उनको अपना स्वरूप मानता है, उसका वह कर्त्ता होता है; परन्तु जिसको राग से भिन्न अपने स्वरूप का भान हुआ है, वह राग का कर्त्ता नहीं होता; क्योंकि वह राग को अपने तत्त्व से भिन्न तत्त्व (आस्रव) जानता है। इसकारण वह भिन्न तत्त्व का कर्त्ता नहीं होता है।

मुमुक्षुः- यह बात अभी बराबर बैठती नहीं है?

पूज्य गुरुदेवश्रीः- बात बैठती नहीं तो फिर से लेते हैं। आत्मा ज्ञानस्वभावी है। इसकारण राग आता है, उसीसमय उस राग के साथ सम्बन्ध नहीं करके अपने ज्ञान में रहकर राग को मात्र जानता है। सेठियों को पैसे की व्यवस्था का राग आता है न! पाँच लाख मकान में डालना, दस लाख व्यापार में डालना इत्यादि... तो यह राग आता है, उससमय ज्ञान तो उस राग को जानता है। ज्ञान राग को करता नहीं है। ज्ञान राग को जानता है यह भी उपचार से है। ज्ञान का तो स्व-परप्रकाशक स्वभाव है। इसकारण सहज स्व-पर का जानना होता है। उसमें आत्मा ने पर को जाना अथवा राग को जाना ऐसा भेद पड़ता होने से वह भी व्यवहार है। मैं ज्ञायक हूँ और यह मेरे परिणाम हैं- ऐसा भेद पड़ा, इसलिए वह व्यवहार है अर्थात् उपचार है। 'आत्मा जानता है' बस, यह अभेद है!

आत्मा जाननेवाला होने से स्व-पर की परिणति को जानता है- ऐसा

पाठ में कहा है। अत: इसका अर्थ यह है कि आत्मा अपने द्रव्य-गुण-पर्याय को जानता है और पर के द्रव्य-गुण-पर्याय को जानता है। पुद्गल अपने को अथवा पर को नहीं जानता; क्योंकि उसमें जानने का गुण नहीं है। राग भी अपने को अथवा आत्मा को नहीं जानता, इसलिए वह भी अचेतन है।

जगत के जीवों की मान्यता में और इस सत्य तत्त्वस्वरूप में जमीन-आकाश जितना अन्तर है। लोग तो दया पालना, दान करना, व्रत पालना, मन्दिर बनाना आदि में धर्म मानते हैं। जबकि यहाँ कहते हैं कि इन सब विकल्पों का कर्त्ता होनेवाले मिथ्यादृष्टि हैं। जो जाननेवाला है, वह ज्ञानी है।

विभाव परिणति से स्वभाव परिणति भिन्न है। विभाव परिणति आस्रव तत्त्व है और आत्मा तो ज्ञायक तत्त्व है। इन दोनों को जो एक मानता है, वहाँ तक वह अज्ञानी है और वह अज्ञान से आस्रव का कर्त्ता होता है; परन्तु जब सुबुद्धि प्रकट होती है, तब मैं कर्त्ता और राग मेरा कार्य ऐसी भ्रान्ति उत्पन्न नहीं होती। लोग तो पालीताना में शत्रुंजय की प्रदक्षिणा कर आने को धर्म मानते हैं और उसका लाभ लेने के लिए दही-पराँठे (थेपला) श्रीखण्ड-शाकर का पानी आदि तैयार रखते हैं; परन्तु भाई! इसमें तुझे अथवा यात्रा करनेवाले को कोई धर्म होनेवाला नहीं है। इसमें जो शुभ विकल्प आया, उसका जो कर्त्ता होता है, वह भी राग और आत्मा को एक मानता होने से अज्ञानी है। जो जड़ के कार्यों को मैं करता हूँ- ऐसा मानता है, वह तो मूढ़ मिथ्यादृष्टि है ही; परन्तु तदुपरांत राग के कार्य को अपना माननेवाला भी मिथ्यादृष्टि है- ऐसा यहाँ कहना है।

अहो! ऐसे मनुष्यदेह अनन्तकाल में मिला है। भाई! आँख बंद होते ही तेरा पता नहीं लगेगा। इस भव में 'आत्मा ज्ञान और आनन्दस्वरूप है, राग से भिन्न है'- ऐसा यदि निर्णय नहीं किया तो कहाँ चला जायेगा भाई? चौरासी के अवतार में तेरा कहीं पता नहीं लगेगा। वहाँ कोई तुझको मदद करने नहीं आयेगा। तू अपनी उलटी दशा के परिणाम का कर्त्ता होता हैं, वहाँ तुझे सुलटा कौन करावे?

शरीरादि की क्रिया तो मेरी नहीं; परन्तु राग की क्रिया भी मेरी नहीं है-

ऐसा समझने पर भ्रम मिटने योग्य हैं; परन्तु जीवों को मिथ्यात्व के पाप का पता ही नहीं है। मिथ्यात्व ही महापाप है। सूक्ष्म मिथ्यात्व भी 'कषाय खाने खोलने' की अपेक्षा अनन्तगुना पाप है- यह इसको पता नहीं है। लोगों को यह बात तो रुचती नहीं है और बाहर में हो..हा और प्रदर्शन करते हैं।

इसप्रकार पाँच श्लोक (6 पद) हुए। अब छठवा श्लोक और उसका पद लेते हैं।

यः परिणमति स कर्त्ता यः परिणामो भवेत्तु तत्कर्म।
या परिणतिः क्रिया सा त्रयमपि भिन्नें न वस्तुतया॥

इस कलश में कर्त्ता-कर्म और क्रिया का स्वरूप कहा है। इस पर बनारसीदास जी द्वारा रचित पद इसप्रकार है:-

कर्त्ता, कर्म और क्रिया का स्वरूप

करता परिनामी दरव, करम रूप परिनाम।
किरिया परजयकी फिरनि, वस्तु एक त्रय नाम॥7॥

अर्थः- अवस्थाएँ पलटनेवाला द्रव्य कर्त्ता है, उसकी अवस्था कर्म है और अवस्था से अवस्थान्तर होना क्रिया है; इसप्रकार वस्तु के तीन नाम हैं।

विशेषः- यहाँ अभेदविवक्षा से कथन है, द्रव्य अपने परिणामों को करनेवाला स्वयं है इसलिये वह उनका कर्त्ता है, वे परिणाम द्रव्य के हैं और उससे अभिन्न हैं इसलिये द्रव्य ही कर्म है, द्रव्य अवस्था से अवस्थान्तर होता है और वह अपनी सब अवस्थाओं से अभिन्न रहता है इसलिये द्रव्य ही क्रिया है। भाव यह है कि द्रव्य ही कर्त्ता है, द्रव्य ही कर्म है और द्रव्य ही क्रिया है; बात एक ही है नाम तीन हैं॥7॥

काव्य - 7 पर प्रवचन

जो कार्य करे, वह कर्त्ता है; जो कार्य हुआ, वह कर्म है और पर्याय का रूपान्तर होना, वह क्रिया है। जैसे कि कुम्हार कर्त्ता है, घड़ा उसका कार्य है और मिट्टी के पिंड की पर्याय बदलकर घटरूप हुई, वह क्रिया है; परन्तु यह भेदअपेक्षा से व्यवहार कथन है। अभेदअपेक्षा से मिट्टी ही कर्त्ता है, मिट्टी

ही घटरूप होने से कर्म है और मिट्टी की ही अवस्था पलटकर घटरूप हुई, इसलिए मिट्टी ही क्रिया है। इसीप्रकार जहाँ तक जीव में अज्ञानभाव हैं, वहाँ तक वह शुभाशुभभाव का कर्त्ता है, वह भाव उसका कार्य है और उसकी ही क्रिया है और जो ज्ञानी होता है, वह राग का कर्त्ता नहीं है; परन्तु राग सम्बन्धी अपने ज्ञान का कर्त्ता है, ज्ञान उसका कार्य है और ज्ञान की क्रिया वह ज्ञान की है। धर्मी शरीरादि परद्रव्यों अथवा राग का कर्त्ता नहीं है। धर्मी तो अपने धर्म परिणाम का –निर्मल पर्याय का कर्त्ता है और वह पर्याय उसका कार्य तथा क्रिया है।

ज्ञानी की दृष्टि राग से हट गई है और ज्ञायक पर स्थापित हो गई है, इसकारण वह ज्ञायक भाव के परिणाम का कर्त्ता होता है। वह पुण्य–पाप के परिणाम का कर्त्ता नहीं है; परन्तु जो होते हैं; उन्हें जानता है– इसकारण वह ज्ञान, ज्ञानी का कार्य है और ज्ञानी की ही वह क्रिया है। संक्षिप्त में– जो द्रव्य की अवस्था होती है, वह द्रव्य उसका कर्त्ता है और अवस्था उसका कार्य है। मिट्टी कर्त्ता है और घड़ा कार्य है। अज्ञानी जीव कर्त्ता और पुण्य–पाप के भाव उसका कार्य है। ज्ञानी जीव कर्त्ता है और ज्ञानभाव उसका कार्य है।

यहाँ कहते हैं कि जहाँ तक तेरी दृष्टि पुण्य–पाप के राग पर है, वहाँ तक तुझको अपने स्वभाव का अनादर है। जहाँ ज्ञायक भाव का आदर होगा, वहाँ राग होगा; परन्तु उसका आदर नहीं रहेगा। बेचारे लोगों को यह अन्तरतत्त्व का मार्ग सुनने को नहीं मिलता है और जिन्दगी व्यर्थ चली जाती है। जिसको पुण्य–पाप के भाव की मिठास है, उसको तो ज्ञायकस्वभाव का अनादर है; परन्तु जिसको ज्ञायकभाव का आदर आया है– चैतन्य की दृष्टि हुई है, उसको पाप–पुण्यभाव का आदर नहीं रहता।

यह यात्रा करने से, तपस्या करने से, व्रत पालने से, दान देने से कुछ धर्म तो होता है न! ऐसा माननेवाले अंधे हैं और ऐसा मनवानेवाले भी अंधे हैं। बापू! तेरे घर में ज्ञानस्वभाव है, तेरे घर में राग नहीं है; इसलिए राग से धर्म नहीं होता है।

ज्ञानी ज्ञान का कर्त्ता है और अज्ञानी राग का कर्त्ता है। अशुभराग मिटकर शुभराग हो या शुभराग मिटकर अशुभराग हो, वह उसकी क्रिया है और ज्ञानी को ज्ञान-आनन्द की दशा थी, वह पलटकर विशेष ज्ञान-आनन्द की दशा होती है, वह ज्ञानी की क्रिया है। एक अवस्था से दूसरी अवस्थारूप होने का नाम क्रिया है। इसप्रकार कर्त्ता-कर्म और क्रिया तीनों नाम एक ही वस्तु के हैं।

विशेष:- यहाँ अभेद विवक्षा से कथन है। द्रव्य स्वयं अपने परिणामों को करनेवाला है। इसकारण वह उनका कर्त्ता है। वे परिणाम द्रव्य के हैं और उससे अभिन्न है- इसकारण द्रव्य ही कर्म है। जैसे कि मिट्टी के परिणाम घटरूप हुए, वे मिट्टी से अभिन्न हैं, इसलिए मिट्टी कर्त्ता है और मिट्टी ही कर्म है। उसीप्रकार आत्मा में अज्ञानभाव से शुभाशुभभाव हुए, उनमें आत्मा ही परिणमा है, इसलिए आत्मा ही विकारी भावरूप कर्म है। अज्ञानी उन परिणामों को अपने से अभिन्न मानता है, इसलिए विकारी भाव ही आत्मा है, और ज्ञानी के जानने-देखने के परिणाम होते हैं, उनसे वह अभिन्न है; इसलिए ज्ञानी ही ज्ञानरूप परिणमता होने से ज्ञान ही कर्म है। कर्त्ता और कर्म एक ही द्रव्य में है, अभिन्न है; इसलिए वह द्रव्य ही कर्त्ता है और द्रव्य ही कर्म है।

भाई! यह सब धीरज से समझने योग्य बात है। द्रव्य एक अवस्था से दूसरी अवस्थारूप होता है और अपनी समस्त अवस्थाओं से अभिन्न रहता है, इसलिए द्रव्य ही क्रिया है। भगवान आत्मा शरीर की अवस्थारूप नहीं होता। शरीर की प्रत्येक अवस्था में उसके परमाणु परिणम रहे हैं, इसलिए परमाणु ही क्रिया है और आत्मा की प्रत्येक अवस्था में आत्मा परिणम रहा है; इसलिए वह अवस्था आत्मा ही है। आनन्द की अवस्था में- क्रिया में आत्मा परिणमता है; इसलिये आनन्द, वह आत्मा है; और विशेष आनन्दरूप से परिणमता है, वह भी आत्मा की क्रिया होने से आत्मा ही है।

ऐसी बात कभी सुनी थी भाई ?

भाई:- कहाँ से सुनी हो साहब!

अरे! जीवों को सत्य बात सुनने को भी नहीं मिली है- इसकारण वे विपरीत मार्ग में चले जा रहे हैं और धर्म हुआ मानते हैं। उनका भव का किनारा किस दिन आयेगा ?वीतराग मार्ग की बातें सूक्ष्म हैं भाई! दुनिया के साथ उसका कहीं मेल खाये ऐसा नहीं है।

संक्षिप्त में भाव यह है कि द्रव्य ही कर्त्ता है, द्रव्य ही कर्म है और द्रव्य ही क्रिया है। वस्तु एक ही है, नाम तीन हैं। शरीर की अवस्था शरीर के परमाणुओं से होती है, आत्मा उसका बिलकुल कर्त्ता नहीं है। इसीप्रकार अज्ञानभाव से राग होता है, उसका कर्त्ता वह अज्ञानी आत्मा ही है, रागरूप होने की क्रिया भी आत्मा की होने से आत्मा ही है। एक पर्याय पलट कर दूसरी पर्याय हुई, इसलिए कोई द्रव्य नहीं पलट गया है -ऐसा कहना है। आत्मा सम्यदर्शन-ज्ञान-चारित्र के परिणामरूप परिणमता है, इसलिए वह आत्मा ही है, अन्य द्रव्य नहीं।

पुण्य-पाप के शुभाशुभभाव होना, वह कोई तेरा स्वरूप नहीं है; परन्तु तू उत्साह से उस भाव का कर्त्ता होकर अपना कर्म मानता है, उसमें तेरे स्वरूप का अनादर होता है; चैतन्यमूर्ति भगवान परमानन्द परमात्मा का अनादर होता है।

'वस्तु एक त्रय नाम'- करनेवाला वह 'कर्त्ता', कार्य वह 'कर्म' और अवस्था का पलटना, वह 'क्रिया'- ऐसे नाम तो तीन पड़े हैं, परन्तु वस्तु तीन नहीं है। एक ही वस्तु के तीन नाम हैं। **क्रमशः**

...पृष्ठ 8 का शेष

जिसे स्वभाव की दृष्टि हो गई है, वह जीव वीतरागी होगा, उसका क्या वर्णन किया जाय ? परन्तु जो मनुष्य ऊँचे-ऊँचे मन्दिर और प्रतिमाएँ बनाता है, उसके पुण्य अगम्य है और साधारणजनों के लिए अकथनीय है। अतः भव्यजनों को पूर्ण वीतरागी शान्त मुद्रायुक्त प्रतिमाएँ तथा मन्दिर उत्साह पूर्वक अवश्य बनाने चाहिए।

यह कथन इस काल के श्रावकों के लिए किया गया है कि उन्हें भक्तिपूर्वक वीतराग भगवान के मन्दिर बनाने चाहिए। *क्रमशः*

स्वानुभूतिदर्शन : बहिनश्री की तत्त्वचर्चा

प्रश्न — विकल्प में तत्त्व सम्बन्धी विकल्प-विचार तो अनेक चलते रहते हैं, परन्तु तत्त्व-निर्णय तक पहुँचा नहीं जाता; विकल्प में तत्त्व के विचारों के सिवाय अधिक कुछ दिखायी नहीं देता, तो क्या करना चाहिए?

समाधान — अपने पुरुषार्थ की मन्दता है, इसलिए आगे नहीं बढ़ा जाता। तत्त्व का अभ्यास है, इसलिए तत्त्व के विचार करता रहता है; परन्तु यह जो ज्ञायक है, वही मैं हूँ इस प्रकार उसे (गहराई से) ग्रहण करके ज्ञायक की श्रद्धा नहीं करता। श्रद्धा के बल से 'मैं ज्ञायक हूँ'—ऐसा भेदज्ञान का अभ्यासमात्र कहनेरूप से नहीं, किन्तु अन्तर से किये बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता। द्रव्यदृष्टि के जोर से तथा भेदज्ञान के अभ्यास के बल से आगे बढ़ सकता है।

तत्त्वनिर्णय के पश्चात् भी श्रद्धा का बल जोरदार रखकर भेदज्ञान का अभ्यास करते रहना। उसके बिना आगे नहीं बढ़ा जाता।

मुमुक्षु—स्व-पर का स्वरूप तो बुद्धि में बराबर बैठ जाता है, तथापि शुष्कता जैसा लगता है और भाव से भींजाकर जो आना चाहिए वह नहीं आता, तो ऐसी स्थिति में क्या करें? कृपा करके समझायें।

बहिनश्री—अपना कारण स्वयं ढूँढ़ना है। अन्तर से हृदय को भींजोकर, आत्मा की महिमा लाकर, तत्त्वनिर्णय को दृढ़ करके तथा उसका पुरुषार्थ करके स्वयं ही आगे बढ़ना है। जो एकत्वबुद्धि हो रही है, उसे तोड़ने पर ही छुटकारा है। दोनों प्रतिपक्ष हैं—यहाँ स्व में एकत्वबुद्धि करनी है और पर से पृथक् होना है। ज्ञायक तो निराला है; उस निराले को निरालेरूप में परिणमन में लाना है। यह किये बिना छुटकारा नहीं है। द्रव्यपर की दृष्टि के जोरपूर्वक भेदज्ञान का अभ्यास

करना; उसके सिवा कोई उपाय नहीं। इस प्रकार अन्तर में स्वयं अपने हृदय को भींगोकर पुरुषार्थ करना, यह एक ही उपाय है। स्व की ओर जाना हो तो यही उपाय है, अन्य कोई उपाय नहीं—ऐसा निर्णय स्वयं को आना चाहिए, और उस निर्णय के बल से उस प्रकार का पुरुषार्थ स्वयं करे तो (कार्य) हो।

मुमुक्षु—निर्णय तो ऐसा ही है कि ज्ञायक के आश्रय बिना सम्यग्दर्शन प्राप्ति का अन्य कोई उपाय नहीं है; परन्तु जोर नहीं आता, तो क्या किया जाय?

बहिनश्री—अन्तर का पुरुषार्थ किये बिना, लगन लगाये बिना छुटकारा ही नहीं है। अनादि का दूसरा अभ्यास है और पुरुषार्थ की मन्दता है, इसलिए अन्यत्र कहीं रुकता ही रहता है; परन्तु भेदज्ञान का बारम्बार अभ्यास करते ही रहना वही उपाय है।

मुमुक्षु—आप कहते हैं, वह बात सच है कि जीव कहीं अन्यत्र रुकता है, उसका ख्याल भी आता है, परन्तु उस समय अलग कैसे होना?

बहिनश्री—ज्ञान से निर्णय किया है, परन्तु भीतर से हृदय इतना भींजा हुआ हो—स्वयं को भीतर से खटक लगे तो भिन्न पड़े। अन्तर में से खटक लगनी चाहिए तथा ज्ञायक की महिमा आनी चाहिए; यह विभावभाव दु:खरूप है, ऐसा अन्तरवेदन में लगना चाहिए। यह विभाव दु:खरूप है और दु:खफलरूप है—ऐसी खटक लगे तो उससे भिन्न पड़े। निर्णय के पश्चात् भी उसे स्वयं को खटक लगनी चाहिए, तब भिन्न पड़े। मात्र विचार किया करे ऐसा नहीं, किन्तु अन्तर से खटक लगनी चाहिए।

मुमुक्षु—जब तक अपने को प्राप्त न हो तब तक क्या यही किया करे?

बहिनश्री—अपने को प्राप्त न हो तब तक द्रव्य पर दृष्टि स्थापित करके अपनी श्रद्धा को जोरदार करने का प्रयत्न तथा भेदज्ञान करना। यह एक ही मार्ग है। द्रव्य-गुण-पर्याय का स्वरूप चारों ओर से समझे, चारों ओर से

शास्त्रों के पहलुओं को विचारता रहे, तत्त्व का विचार करे और स्वयं अन्तर में विचारकर शास्त्रों में आता है तद्नुसार निर्णय करे। अपनी श्रद्धा का बल स्वयं प्रगट करना चाहिए कि यह मैं ज्ञायक हूँ और यह मैं नहीं हूँ।—ऐसा बल श्रद्धा में लाना चाहिए। एकबार विचार करे कि यह मैं हूँ और यह मैं नहीं, तो कुछ नहीं होगा। परन्तु उसे कार्य में लाना चाहिए, अन्तर परिणति में उतारना चाहिए। उपाय तो यह एक ही है।

जो कोई सिद्ध हुए हैं वे भेदविज्ञान से हुए हैं और जो नहीं हुए वे भेदविज्ञान के अभाव से नहीं हुए। भेदज्ञान कहाँ तक भाना? उसके दो अर्थ हैं—एक तो यह कि जबतक यह आत्मा स्वयं भिन्न पड़कर स्वरूप में स्थिर न हो तबतक भेदज्ञान भाना। और दूसरा अर्थ यह है कि जबतक केवलज्ञान न हो तबतक भेदज्ञान को भाते रहना। यद्यपि प्रारम्भ में (भेदज्ञान का) अभ्यास सहज नहीं होता तथापि अभ्यास करते रहना। सम्यग्दर्शन प्राप्त करने से पूर्व और पश्चात् भी, जबतक केवलज्ञान प्राप्त न हो तबतक भेदज्ञान भाते रहना। द्रव्यदृष्टि का जोर—भेदज्ञान का बल—ठेठ केवलज्ञान न हो तबतक साथ रहता है। यह एक ही उपाय है। अपूर्ण दशा है इसलिए अणुव्रत, पंच महाव्रत, देव-शास्त्र-गुरु की महिमा आदि ऐसे शुभभाव तथा सम्यग्दर्शन के आठ अंगरूप व्यावहारिक भाव आते हैं, वह सब साथ होता है; परन्तु मोक्ष का उपाय तो अन्तर में एक सम्यग्दर्शन की सहजधारा चले वह है। सम्यग्दृष्टि को सहज ज्ञाताधारा चलती है और वह सहज पुरुषार्थ से चलती है। उसने सहज मार्ग जान लिया है। अनुभव से पूर्व जिज्ञासु को भी अभ्यास तो एक ही करना है, जो मार्ग है, उस मार्ग का ही अभ्यास करना है। अभ्यास न हो तो बारम्बार पुरुषार्थ करना; परन्तु मार्ग तो एक ही है। भेदविज्ञान कहाँ तक भाना? कि आत्मा आत्मा में स्थिर न हो जाये वहाँ तक धारावाही भाना, ऐसा समयसार में आता है।

प्रथमानुयोग

तीर्थधाम चिदायतन के पंच कल्याणक प्रसंग पर

धार्मिक नगरी हस्तिनापुर का वर्णन उत्तरपुराण से

जिस प्रकार शरीर के मध्य में बड़ी भारी नाभि होती है, उसी प्रकार उस कुरुजांगल देश के मध्य में एक हस्तिनापुर नाम की नगरी है। अगाध जल में उत्पन्न हुए अनेक पुष्पों-द्वारा जिनकी शोभा बढ़ रही है, ऐसी तीन परिखाओं से वह नगर घिरा हुआ था। धूलि के ढ़ेर और कोट की दीवारों से दुर्लंघ्य वह नगर गोपुरों से युक्त दरवाजों, अट्टालिकाओं की पंक्तियों तथा बन्दरों के सिर जैसे आकारवाले बुर्जों से बहुत ही अधिक सुशोभित हो रहा था। वह नगर, राजमार्ग में ही मिलनेवाले डराने के लिए बनाये हुए हाथी, घोड़े आदि के चित्रों तथा बहुत छोटे दरवाजों वाली बहुत-सी गलियों से युक्त था। जो सार वस्तुओं से सहित हैं तथा जिनमें सदाचारी मनुष्य इधर से उधर टहला करते हैं ऐसे वहाँ के राजमार्ग स्वर्ग और मोक्ष के मार्ग के समान सुशोभित होते थे। वहाँ उत्पन्न होनेवाले मनुष्यों में श्रेष्ठ वस्तुओं से उत्पन्न हुए नेपथ्य—वस्त्राभूषणादि से कुछ भी भेद नहीं था केवल कुल, जाति, अवस्था, वर्ण, वचन और ज्ञान की अपेक्षा भेद था। उस नगर में राजभवनों के शिखरों के अग्रभाग पर जो ध्वजाएँ फहरा रही थीं, उनसे रुक जाने के कारण जब सूर्य पर बादलों का आवरण नहीं रहता, उन दिनों में भी धूप का प्रवेश नहीं हो पाता था। पुष्प, अंगराग तथा धूप आदि की सुगन्धि से अन्धे होकर जो भ्रमर आकाश में इधर-उधर उड़ रहे थे, उनसे घर के मयूरों को वर्षाऋतु की शंका हो रही थी। वहाँ धर्म अहिंसा रूप माना जाता था, मुनि इच्छारहित थे, और देव रागादि दोषों से रहित अर्हन्त ही माने जाते थे इसलिए वहाँ के सभी मनुष्य धर्मात्मा थे। वहाँ के श्रावक, चक्की चूला

शेष पृष्ठ 24 पर.....

करणानुयोग

जानिये अरिहन्तों के 46 गुण

जन्म के दस अतिशय—

1. मल-मूत्र रहित शरीर, 2. पसीना रहित शरीर, 3. सुगन्धमय शरीर, 4. मधुर वचन, 5. वज्रवृषभनाराच संहनन, 6. एक हजार आठ लक्षण, 7. अतिशय सुन्दर रूप, 8. श्वेत रुधिर, 9. समचतुरस्र संस्थान, 10. अतुल बल।

केवलज्ञान के दस अतिशय—

1. चारों दिशाओं में सौ-सौ योजन तक सुभिक्ष, 2. आकाश गमन, 3. अदया का अभाव (हिंसा का अभाव), 4. उपसर्ग नहीं, 5. कवलाहार नहीं, 6. चारों दिशाओं में मुख दिखाई देना, 7. सब विद्याओं का ईश्वरपना, 8. शरीर की छाया न पड़ना, 9. नाखून और केशों का नहीं बढ़ना, 10. नेत्रों की पलकों का नहीं झपकना।

देवकृत चौदह अतिशय—

1. अर्धमागधी भाषा, 2. सकल जीवों में परस्पर मैत्री भाव का होना, 3. सब ऋतु के फल-फूलों का फलना, 4. दिशाओं की निर्मलता, 5. मन्द-मन्द सुगन्धित वायु का चलना, 6. सब जीवों को आनन्द देनेवाली कंटक रहित भूमि, 7. गन्धोदक की वृष्टि होना, 8. भगवान के दोनों चरणों के तले 225 स्वर्ण कमल रचना, 9. आकाश का निर्मल होना, 10. देवों का जय-जयकार शब्द, 11. धर्मचक्र का आगे-आगे चलना, 12. अष्ट मंगल द्रव्यों का होना, 13. देवों द्वारा भूमि को दर्पणवत् निर्मल करना, 14. समस्त देवों का आनन्दमय होना।

चार अनन्त चतुष्टय —

1. अनन्त दर्शन, 2. अनन्त ज्ञान, 3. अनन्त सुख, 4. अनन्त वीर्य।

शेष पृष्ठ 24 पर.....

प्रथमानुयोग

कवि परिचय

पण्डित द्यानतरायजी

आपका जन्म आगरा में हुआ था। बचपन में उन्हें उर्दू, फारसी का ज्ञान कराया गया, तो संस्कृत के माध्यम से धार्मिक शिक्षा भी दी गई। गृहस्थ जीवन दु:खमय रहा। वे वि.सं. 1780 में दिल्ली आकर रहने लगे थे। उनकी प्रसिद्ध रचना 'धर्म विलास' यहाँ पर ही पूरी हुई। इसमें पदों की संख्या 323 है। कुछ पूजाएँ हैं। ग्रन्थ के साथ विस्तृत प्रशस्ति भी निबद्ध है, जिससे आगरा की सामाजिक परिस्थितियों का अच्छा परिचय मिलता है।

द्यानतरायजी ने पूजा और भक्तियों का निर्माण करके जैन भक्ति की परम्परा में जैसा सरस योगदान किया है, वैसा उस समय तक कोई नहीं कर सका था। उनकी देव-शास्त्र-गुरु की पूजा का तो प्रत्येक जैन मन्दिर में प्रतिदिन पाठ होता है। इसके अतिरिक्त बीस तीर्थंकर, पंचमेरु, दशलक्षण, सोलह कारण, रत्नत्रय, निर्वाणक्षेत्र, नन्दीश्वर द्वीप, सिद्धचक्र और सरस्वती पूजाएँ भी उन्हीं की कृतियाँ हैं। उन्होंने पाँच आरतियों का भी निर्माण किया।

भक्तियों का प्रारम्भ क्रमश: इहविध मंगल आरती कीजै, आरती श्री जिनराज तिहारी, आरती कीजै श्रीमुनिराज की, करो आरती वर्द्धमान की और मंगल आरती आत्माराम से होता है। उनके स्वयंभू पार्श्वनाथ और एकीभाव स्तोत्रों में पार्श्वनाथ स्तोत्र मौलिक है। इनके अतिरिक्त समाधि मरण, धर्म पच्चीसी, अध्यात्म पंचासिका, 108 नामों की गुणमाल, दशस्थान चौबीसी और छहढाला (सद्य: प्राप्त) भी उन्हीं की रचनाएँ हैं। उनका समूचा साहित्य भाव और भाषा दोनों ही दृष्टियों से खरा है।

द्यानतरायजी के समय जैन समाज छिन्न-भिन्न हो गया था। विदेशी शासकों की मार और शिक्षा की पद्धति बदल जाने से आगमों की गहराई में जाना कठिन हो गया था। उन्होंने महसूस किया कि जैन जनमानस को सहज सरल पद्धति से आगम से जोड़ना आवश्यक है। उस समय भक्ति काव्यों का जोर था, उन्होंने यही प्रयोग जैनधर्म के श्रद्धालुओं को जिनदेव

और जिनवाणी से जोड़े रखने के लिए किया। उनकी मूल शिक्षा से बिछड़े स्त्री, पुरुषों व बालकों को पूजा व भक्ति में सहज आनन्द प्राप्त हुआ और यो कहना चाहिए द्यानतरायजी अपने उद्देश्य में सफल हो गए। घट-घट में जिनदेव विराजमान हो गए।

यह सत्य है कि 16वीं-17वीं-18वीं शताब्दी भारतीय चिन्तन व जीवनशैली के लिए अत्यन्त घातक थी। मन और मस्तिष्क को जोड़े रखने का कार्य बनारसीदासजी व द्यानतरायजी ने किया। संगीत से जुड़कर इन सार्थवाहकों की कृतियों ने जैन जीवन को सांत्वना दी। पण्डित जुगलकिशोरजी मुख्तार ने इस कार्य को मेरी भावना जैसी राष्ट्रीयकृति देकर ऊँचाई पर पहुँचाया।

..... पृष्ठ 21 का शेष

आदि पाँच कार्यों से जो थोड़ा-सा पाप संचित करते थे, उसे पात्रदान आदि के द्वारा शीघ्र ही नष्ट कर डालते थे। वहाँ का राजा न्यायी था, प्रजा धर्मात्मा थी, क्षेत्र जीवरहित-प्रासुक था, और प्रतिदिन स्वाध्याय होता रहता था, इसलिए मुनिराज उस नगर को कभी नहीं छोड़ते थे। जिनके वृक्ष अनेक पुष्प और फलों से नम्र हो रहे हैं तथा जो सबको आनन्द देनेवाले हैं, ऐसे उस नगर के समीपवर्ती वनों से इन्द्र का नन्दनवन भी जीता था।

(श्लोक, 363 से 376 तक)

क्रमशः

..... पृष्ठ 22 का शेष

अष्ट प्रातिहार्य—

1. सिंहासन, 2. पुष्प वृष्टि, 3. अशोक वृक्ष, 4. प्रभा मण्डल (भामण्डल), 5. दिव्य ध्वनि, 6. दुन्दुभि बाजों का बजना, 7. तीन छत्र, 8. चौंसठ चँवर।

करणानुयोग

गतांक अप्रैल 2023 से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

आचार्य वट्टकेर ने स्वाध्याय के भेद इस प्रकार बतलाये हैं—

परियट्टणाय वायण पडिच्छणाणुपेहणा य धम्मकहा।
थुदिमंगलसंजुत्तो पंचविहो होइ सज्झाओ॥

अर्थात् स्तुति मंगल संयुक्त परिवर्तन वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा पाँच प्रकार का स्वाध्याय करना चाहिए।

(मूलाचार, गाथा 393, पृ. 310)

इसी की आचारवृत्ति में कहते हैं पढ़े हुए ग्रन्थ को पुनः पुनः पढ़ना या रटना, परिवर्तन है। शास्त्र का व्याख्यान करना, वाचना है। शास्त्र का श्रवण करना पृच्छना है। अनित्य आदि बारह प्रकार की अनुप्रेक्षाओं का चिन्तवन करना, अनुप्रेक्षा है। त्रेसठ श्लाका पुरुषों के चरित्र पढ़ना, धर्म कथा है। स्तुति, मुनि वन्दना, देव वन्दना और मंगल इनसे संयुक्त स्वाध्याय पाँच प्रकार का होता है।

यहाँ उमास्वामी आचार्य धर्मोपदेश बतलाते हैं तथा वट्टकेर आचार्य धर्मकथा को स्वाध्याय के भेद में शामिल करते हैं। दोनों आचार्यों में मतभेद नहीं है, अपितु धर्मोपदेश देना अथवा धर्मकथा पढ़ना-पढ़ाना एक ही भाव का द्योतक है।

वाचना—

पण्डित आशाधरजी कहते हैं—

शब्दार्थशुद्धता द्रुतविलम्बिताद्यूनता च सम्यक्त्वम्।
शुद्धग्रन्थार्थोभयदानं पात्रेऽस्य वाचना भेदः॥

(धर्मामृत अनगार, 7/83, पृ. 535)

शब्द की शुद्धता, अर्थ की शुद्धता, बिना विचारे न तो जल्दी-जल्दी पढ़ना और न अस्थान में रुक-रुककर पढ़ना तथा 'आदि' शब्द से पढ़ते हुए अक्षर या पद न छोड़ना ये सब सम्यक्त्व या समाचीनता है। और विनय

आदि गुणों से युक्त पात्र को शुद्ध ग्रन्थ, उसका शुद्ध अर्थ और शुद्ध ग्रन्थ तथा अर्थ प्रदान करना स्वाध्याय का भेद वाचना है।

अन्य जीवों के लिए कृति के अर्थ की प्ररूपणा वाचना कहलाती है।

(धवला, पुस्तक-9, पृ. 263)

शास्त्र का व्याख्यान करना, वाचना है।

वाचना के भेद—

शिष्यों को पढ़ाने का नाम वाचना है। वह चार प्रकार की है—

नन्दा वाचना, भद्रा वाचना, जया वाचना एवं सौम्या वाचना।

(धवला, पुस्तक-9, पृ. 252),

नन्दा वाचना - अन्य दर्शनों को पूर्वपक्ष करके उनका निराकरण करते हुए स्वपक्ष को स्थापित करनेवाली व्याख्या नन्दा वाचना कहलाती है।

भद्रा वाचना - युक्तियों द्वारा समाधान करके पूर्वापर विरोध का परिहार करते हुए सिद्धान्त में स्थिर समस्त पदार्थों की व्याख्या का नाम भद्रा वाचना है।

जया वाचना - पूर्वापर विरोध के परिहार के बिना सिद्धान्त के अर्थों का कथन करना जया वाचना है।

सौम्या वाचना - कहीं-कहीं स्खलनपूर्ण वृत्ति से जो व्याख्या की जाती है, वह सौम्या वाचना कहलाती है। **(धवला, पुस्तक-9, पृ. 252)**

पृच्छना—

प्रच्छनं संशयोच्छित्त्यै निश्चितद्रढनाय वा।
प्रश्नोऽधीतिप्रवृत्त्यर्थत्वादधीतिरसावपि॥

(धर्मामृत अनगार, 7/84, पृ. 535)

ग्रन्थ, अर्थ और दोनों के विषय में 'क्या यह ऐसा है या अन्यथा है'— इस सन्देह को दूर करने के लिए अथवा 'यह ऐसा ही है।' इस प्रकार से निश्चित को भी दृढ़ करने के लिए प्रश्न करना, पृच्छना है।

अज्ञात अर्थ के विषय में पूछना पृच्छना है। शास्त्र का श्रवण करना पृच्छना है। **क्रमशः**

बालवाटिका

रात्रिभोजन का महापाप

एक बनिए ने रात्रिभोजन करना छोड़ा था और वही भगवान रामचन्द्र बना था। अतः तुम भी रात्रिभोजन करना छोड़ो। भरतक्षेत्र में एक धनदत्त नाम का बनिया रहता था। एक बार सेठ धनदत्त मार्ग में, अत्यन्त थक गया; खेद–खिन्न हुआ और सूर्यास्त के बाद रात्रि में कोई धार्मिक आश्रम में पहुँचा, उसे प्यास बहुत तेज लग रही थी, उसने किसी महात्मा को देखा और कहा–

''आप पुण्य कार्य करनेवाले हो, मैं बहुत प्यासा हूँ। इसलिए मुझे पानी पिला दीजिए।''

तब महात्मा ने उससे मधुर वाणी में कहा–

''हे वत्स! रात्रि में अमृत पीना भी उचित नहीं तो फिर पानी की क्या बात है? जिस समय आँख भी अपना व्यापार (देखने का कार्य) करना छोड़ देती है, तब आँख से नहीं दिखते–ऐसे सूक्ष्म जीव चारों ओर घूमते रहते हैं। ऐसे अन्धकार में रात्रि के समय में तू भोजन–पान मत कर। हे बन्धु!! यदि तुझे कष्ट होवे तो भी रात्रिभोजन मत कर! रात्रि में भोजन का भाव करके, दुःख भरे हुए संसार–समुद्र में मत पड़।

धर्मात्मा की अमृत जैसी मधुर वाणी सुनकर सेठ धनदत्त का मन शान्त हो गया और प्रसन्नता से उसके हृदय में दया प्रकटी। उसी समय रात्रिभोजन छोड़कर अहिंसादि अणुव्रत धारण किये। अल्प शक्ति के कारण यह महाव्रत धारण नहीं कर सका। अणुव्रत सहित देह छोड़ी और वह स्वर्ग का देव हुआ।

बन्धुओं! यह धनदत्त का जीव ही फिर आगे जाकर अपने भगवान रामचन्द्र बने। उपर्युक्त कहानी से यह शिक्षा मिलती है कि तुम भी रात्रिभोजन का पाप छोड़ो और आत्महित का उद्यम करो।

शिक्षा–दया धर्म का मूल है; अतः उन सभी बातों से बचना चाहिए, जिसमें जीव– घात होता है।

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– जिसने खम्बे का एक भाग जाना, उसने सम्पूर्ण खम्बे को लक्ष्य में लिया है, लकड़ी का एक भाग देखने से यह ख्याल में आता है कि यह लकड़ी का एक भाग है। किन्तु पुस्तक का या अन्य का नहीं। सूर्य की उपस्थिति ख्याल में आती है।

उसी प्रकार– मति–श्रुत ज्ञान, केवल ज्ञान का अवयव है– ऐसा निर्णय किये बिना मति–श्रुत ज्ञान सच्चा नहीं होता। अरिहंतो का केवलज्ञान एवं सिद्धों की उपस्थिति मति–श्रुत ज्ञान में ख्याल में आते है।

जिस प्रकार– निर्धन को धनवान की सेवा करने से धन प्राप्ति होती है किन्तु निर्धन की सेवा करने से धन प्राप्ति नहीं होती है।

उसी प्रकार– जिसको निजानन्द प्रगट करना हो, वह जिनको पूर्ण ज्ञानानन्द निधि प्रगट हुई है– ऐसे इष्ट देव और गुरु की सेवा करता है अर्थात् उनके स्वरूप को जानकर नमस्कार करता है।

जिस प्रकार– गधे के ऊपर पुस्तकें लाद देने से वह ज्ञानी नहीं हो जाता ।

उसी प्रकार– बहुत शास्त्र पढ़ लेने अथवा रट लेने मात्र से कोई ज्ञानी नहीं हो जाता, बिना आत्मा को जाने अपनी अज्ञानता से मद में आ जाता है।

जिस प्रकार– कोई बालक से पूछे कि तुझे विवाह करना है? तो उल्लास में आकर हाँ कर देता है परन्तु वह विवाह का मतलब समझता नहीं है।

उसी प्रकार– समझे बिना उल्लास में आकर मुनिपना धारण करने से कुछ भला नहीं होता। वह तो बालक के द्वारा विवाह के लिए हाँ करने जैसा है।

जिस प्रकार– कमल के मध्य भाग में केशर का तन्तु होता है, वह केशर का तन्तु ही कमल का सार है।

उसी प्रकार– मुनियों के हृदय रूपी कमल में भगवान चिदानन्द आत्मा आनन्द सहित विराजमान है।

जिस प्रकार– अमेरिका से माल आता है तो डॉलर में उसकी कीमत चुकानी पड़ती है। इंग्लैड में खरीदारी करनी होती है तो पौंड देने होते है।

उसी प्रकार– आत्मवस्तु प्राप्त करना हो तो ज्ञान की कीमत चुकानी पड़ेगी अर्थात् जितना मति–श्रुतज्ञान है, वह सब आत्मा में लगाना पड़ेगा।

क्रमशः **संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की**

दशलक्षण पर्व पर मङ्गलायतन में विशेष कार्यक्रम

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ दशलक्षण पर्व 19 सितम्बर से 28 सितम्बर 2023 के अवसर पर बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबहिन और **सोलापुर** से **पण्डित विक्रान्त शाह,** पण्डित समकित शास्त्री, पण्डित अभिषेक शास्त्री द्वारा स्वाध्याय आदि गतिविधियों का लाभ प्राप्त होगा। मङ्गलायतन से दशलक्षण महापर्व के अवसर धर्मप्रभावनार्थ पण्डित अशोक लुहाड़िया, उत्तरप्रदेश के सभी स्थानों में; पण्डित सुधीर शास्त्री दिल्ली और आसपास के क्षेत्रों में; डॉ. सचिन्द्र जैन, मध्यप्रदेश के सभी स्थानों में तत्त्वप्रभावना के साथ-साथ तीर्थधाम चिदायतन के प्रचार-प्रसार में संलग्न रहेंगे।

तीर्थधाम मङ्गलायतन में बाहर से पधारनेवाले सभी साधर्मियों के लिए आवास एवं भोजन की व्यवस्था समुचित रहेगी।

सम्पर्कसूत्र - श्री अशोक बजाज, 9997996346 (ऑफिस)
पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800

सितम्बर 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

6 सितम्बर - भाद्रपद कृष्ण 7
श्री शान्तिनाथ गर्भ कल्याणक
7 सितम्बर - भाद्रपद कृष्ण 8
अष्टमी
13 सितम्बर - भाद्रपद कृष्ण 14
चतुर्दशी
19 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 4
दशलक्षण व्रत प्रारम्भ
20 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 5
पुष्पांजलि व्रत प्रारम्भ
21 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 6
श्री सुपार्श्वनाथ गर्भ कल्याणक
23 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 8
अष्टमी
श्री पुष्पदंत मोक्ष कल्याणक
24 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 9 / 10
सुगन्ध दशमी
पुष्पांजलि व्रत समाप्त
27 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 13
रत्नत्रय व्रत प्रारम्भ
28 सितम्बर - भाद्रपद शुक्ल 14
चतुर्दशी
श्री वासुपूज्य मोक्ष कल्याणक
30 सितम्बर - आश्विन कृष्ण 1
क्षमावाणी

समाचार-दर्शन

विद्यानिकेतन समाचार

मङ्गलायतन : भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन की गतिविधियों में साप्ताहिक गोष्ठी के क्रम में कक्षा 8 के मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा 'कषाय' विषय पर गोष्ठी का आयोजन दिनांक 16-7-2023 को किया गया। जिसमें वक्ता मङ्गलार्थी अभिराज, अविरुद्ध, अतिशय, जिसका संचालन मङ्गलार्थी प्रत्यक्ष द्वारा किया गया। जिसकी अध्यक्षता श्रीमती बीना लुहाड़िया द्वारा की गयी।

इसी क्रम में दिनांक 22-7-2023 को पाप विषय पर कक्षा 8के मङ्गलार्थी भव्यांश, देव, नयांश, प्रशम। जिसकी अध्यक्षता श्री राहुल जैन सनावद द्वारा की गयी। संचालन मङ्गलार्थी मेघांश जैन जयपुर ने किया।

संस्कार कक्षा का शुभारम्भ

भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मङ्गलार्थी बच्चों के हितार्थ साप्ताहिक संस्कार कक्षा का भी शुभारम्भ आदरणीया बहिनजी बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबहिन द्वारा 'विद्यार्थी के पंच लक्षण' विषय पर हुई। जो प्रत्येक शनिवार को आयोजित होगी।

शान्तिपूर्ण रैली सम्पन्न

अलीगढ़ : अलीगढ़ में आयोजित मुनिराज कामकुमार नन्दी की निर्मम हत्या के विरोध में दिनांक 20-7-2023 को आयोजित शान्तिपूर्ण रैली निकाली गयी। जिसमें मङ्गलायतन के विद्यार्थी एवं सदस्यों ने शामिल होकर अपना सहयोग प्रदान किया।

चिदायतन : बैठक सम्पन्न

तीर्थधाम चिदायतन में दिनांक शनिवार, 22-07-2023 को आगामी पंच कल्याणक और वेदी शिलान्यास के उपलक्ष्य में बैठक आयोजित की गयी। जिसमें तीर्थधाम चिदायतन के सभी ट्रस्टीगण श्री आई.एस. जैन मुम्बई, श्री अजित जैन बड़ोदरा, श्री स्वप्निल जैन अलीगढ़, श्री नवनीत जैन मेरठ, श्रीमती बीना जैन देहरादून, श्री अनिल जैन बुलन्दशहर, श्री आदीश जैन दिल्ली, श्री अम्बुज जैन मेरठ, पण्डित संजय जैन जेवर/कोटा, तीर्थधाम मङ्गलायतन से पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सुधीर शास्त्री सहित अनेकानेक लोग सरधना, मेरठ, सहारनपुर, दिल्ली, खतौली आदि से पधारे। इस अवसर पर चिदायतन में आगामी पंच कल्याणक महामहोत्सव और इसके पूर्व दिनांक 15-16 नवम्बर को होनेवाले वेदी शिलान्यास कार्यक्रम को उत्साहपूर्वक सम्पन्न करने सम्बन्धी रूपरेखा पर अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये।

वैराग्य समाचार

वढवान : पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निरन्तर तल्लीन रहनेवाले वयोवृद्ध विद्वान, प्रमुख प्रतिष्ठाचार्य, आत्मार्थी, ब्रह्मचारी **पण्डितरत्न आदरणीय वजुभाई साहेब, वढवान का देह परिवर्तन दिनांक 14 जुलाई 2023 को हो गया है।** आपका तीर्थधाम मङ्गलायतन के प्रति अपार स्नेह था।

पूज्य गुरुदेवश्री की उपस्थिति में कई पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें सम्पन्न करानेवाले आदरणीय वजुभाई को सम्पूर्ण समाज प्यार से 'साहेबजी' के नाम से सम्बोधित करता था। आपने अन्तिम समय तक गुरुदेवश्री की वाणी द्वारा आत्मचिन्तन करते हुए, समाधिभावनापूर्वक देह का परित्याग किया।

तीर्थधाम मङ्गलायतन परिवार आपके सुगतिगमन, बोधिलाभ एवं शीघ्र मुक्ति प्राप्ति की भावना भाता है।

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
ग्यारहवीं पुस्तक की वाचना 16 जुलाई 2023 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम – आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर	01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,

- Password - tm@4321
  youtube channel - theerthdham mangalayatan

  के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

तीर्थधाम मंगलायतन से प्रकाशित एवं उपलब्ध साहित्य सूची

मूल ग्रन्थ–

1. समयसार वचनिका
2. प्रवचनसार (हिन्दी, अंग्रेजी)
3. नियमसार
4. इष्टोपदेश
5. समाधितंत्र
6. छहढाला (हिन्दी, अंग्रेजी सचित्र)
7. मोक्षमार्ग प्रकाशक
8. समयसार कलश
9. अध्यात्म पंच संग्रह
10. परम अध्यात्म तरंगिणी
11. तत्त्वज्ञान तरंगिणी
12. हरिवंशपुराण वचनिका
13. सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन

1. प्रवचनरत्न चिन्तामणि
2. मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन
3. प्रवचन नवनीत
4. वृहद्द्रव्य संग्रह प्रवचन
5. आत्मसिद्धि पर प्रवचन
6. प्रवचनसुधा
7. समयसार नाटक पर प्रवचन
8. अष्टपाहुड़ प्रवचन
9. विषापहार प्रवचन
10. भक्तामर रहस्य
11. आतम के हित पंथ लाग!
12. स्वतंत्रता की घोषणा
13. पंचकल्याणक प्रवचन
14 मंगल महोत्सव प्रवचन
15. कार्तिकेयानुप्रेक्षा प्रवचन
16. छहढ़ाला प्रवचन
17. पंचकल्याणक क्या, क्यों, कैसे?
18. देखो जी आदीश्वरस्वामी
19. भेदविज्ञानसार
20. दीपावली प्रवचन
21. समयसार सिद्धि
22. आध्यात्मिक सोपान
23. अमृत प्रवचन
24. स्वानुभूति दर्शन
25. साध्य सिद्धि का अचलित मार्ग
26. दशधर्म प्रवचन
27. वह घड़ी कब आयेगी
28. अहो भाव!

पण्डित कैलाशचन्द्रजी का साहित्य

1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग 1 से 7) (हिन्दी गुजराती)
2. मंगल समर्पण
3. मंगल पत्रांजलि
4. मंगल संबोधन
5. मंगल दैनन्दिनी
6. मंगल देशना

अन्य

1. फोटो फ्रेम (पूज्य गुरुदेवश्री, बहिनश्री)

2. सी.डी.

3. मंगल भक्ति सुमन
4. मंगल उपासना
5. करणानुयोग प्रवेशिका
6. धन्य मुनिदशा
7. धन्य मुनिराज हमारे हैं!
8. प्रवचनसार अनुशीलन
9. पंडित टोडरमल
10. वस्तुविज्ञानसार
11. अध्यात्मत्रिपाठ संग्रह

बाल साहित्य (कॉमिक्स)

1. कामदेव प्रद्युम्न
2. बलिदान
3. मंगल प्रज्ञा (भाग 1, 2, 3)
4. मंगल शासन (भाग 1, 2)
5. मंगल प्रभावना (भाग 1, 2)

सम्पर्क –

सम्पर्कसूत्र–पण्डित सुधीर शास्त्री, 9756633800; पण्डित अभिषेक शास्त्री, 7610009487

Email : info@mangalayatan.com

श्रीमान सद्धर्मानुरागी बन्धुवर,

सादर जयजिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

आशा है आराधना-प्रभावनापूर्वक आप सकुशल होंगे।

वीतरागी जिनशासन के गौरवमयी परम्परा के सूत्रधार पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निर्मित आपका अपना **तीर्थधाम मङ्गलायतन** बीस वर्षों से, सुचारुरूप से, अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गतिमान है।

वर्तमान काल की स्थिति को देखते हुए, अब **मङ्गलायतन** का जीर्णोद्धार एवं अनेक प्रभावना के कार्य, जैसे-भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, भोजनशाला, **मङ्गलायतन** पत्रिका प्रकाशन आदि कार्यों को सुचारू रूप से भी व्यवस्था एवं गति प्रदान करना है। यह कार्य आपके सहयोग के बिना, सम्भव नहीं हैं। इसके लिए हमने एक योजना बनायी है, जिसमें आपको एक छोटी राशि प्रतिमाह दानस्वरूप प्रदान करनी होगी। इस योजना का नाम - **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** रखा गया है। हम आपको इस महत्त्वपूर्ण योजना में सम्मानित सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते है। **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** में आपको प्रतिमाह, कम से कम मात्र एक हजार रुपये दानस्वरूप देने हैं।

इस योजना के माध्यम से आप हमें प्रतिमाह 1,000 (प्रतिवर्ष 1000X12=12,000) रुपये दानस्वरूप देंगे। भारत सरकार ने **मङ्गलायतन** को किसी भी रूप में दी जानेवाली प्रत्येक दानराशि पर, आयकर अधिनियम की धारा 80जी के अन्तर्गत छूट प्रदान की है। आप इस महान कार्य में सहभागिता देकर, स्व-पर का उपकार करें।

आप इसमें स्वयं एवं अपने परिवारीजन, इष्टमित्र आदि को भी सदस्य बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। साथ ही **तीर्थधाम मङ्गलायतन** द्वारा संचालित होनेवाले कार्यक्रमों में, आपकी सहभागिता, हमें प्राप्त होगी।

आप यथाशीघ्र पधारकर यहाँ विराजित जिनबिम्बों के दर्शन करें एवं वीतरागमयी वातावरण का लाभ लेवें - ऐसी हमारी भावना है।

हार्दिक धन्यवाद एवं जयजिनेन्द्र सहित

अजितप्रसाद जैन	**स्वप्निल जैन**	**सुधीर शास्त्री**
अध्यक्ष	महामन्त्री	निदेशक

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाइल ..... ई-मेल .....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं ..... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

''चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय''

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए। – आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं –

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/

3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST
Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

तीर्थधाम चिदायतन के बढ़ते चरण.....

निर्माणाधीन तीर्थधाम चिदायतन की बैठक के अवसर
पर पधारे हुए समस्त पदाधिकारीगण।

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मुनिराज का निज वैभव

सम्यग्दर्शन होने पर अतीन्द्रिय आनन्द का अल्प स्वाद आता है, परन्तु मुनि को उसका अतिप्रचुर आस्वादन होता है। समयसार की पाँचवी गाथा की टीका में भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेव ने निजवैभव बतलाते हुए कहा है कि **कैसा है निजवैभव ?** निरन्तर झरते हुए सुन्दर आनन्द की मुद्रा अर्थात् छापवाला अतीन्द्रिय प्रचुर स्वसंवेदन से आचार्य भगवान का निजवैभव उत्पन्न हुआ है। **आत्मवस्तु स्वभाव से तो वीतरागस्वरूप है, परन्तु मुनिराज को पर्याय में भी अतिशय वीतरागता-समताभाव है।**

(- वचनामृत प्रवचन, पृष्ठ 250)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. जयन्तीलाल जैन,मङ्गलायतन वि०वि०

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com